Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XIV, Issue No. 2, January-2018, ISSN 2230-7540

परम्परागत माध्यमों की संवाहक हरियाणवी बोली एवं संस्कृति

Deepak Rathee*

Assistant Director, Credes Media Solution Pvt. Ltd., New Delhi

----------X----------

भारत में संचार माध्यमों का उद्भव प्राचीनकाल से ही है। महर्षि नारद मुनि अपने काल में सभी स्थानों का भ्रमण करके समाचार संग्रह कर उचित समय पर उसका प्रचार किया करते थे जिससे सम्बन्धित व्यक्ति आवश्यकतानुसार अपनी भूल सुधार सके या अपने कार्य को अच्छे ढंग से पूरा कर सके। नारद मुनि के कार्य भडकाऊ नहीं वरन् जनकल्याण की भावना से परिपूर्ण होते थे। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का पाठ उनसे सीखा जा सकता है।

सम्प्रेषण एवं संचार में चोली–दामन का साथ है। संचार एवं सम्प्रेषण के अन्तर को समझना बड़ा कठिन है। सम्प्रेषण की सीमा रेखा कब माध्यम द्वारा संचार अथवा जनसंचार में बदल जाती है। इस पर कुछ कहना बडा मुश्किल है। यानी संचार एवं माध्यम एक दूसरे के पूरक हैं। इनका सम्बन्ध प्रारंभ से ही मानव से ही रहा है। ज्यों–ज्यों मानव ने उन्नति की संचार एवं जनसंचार के विभिन्न माध्यमों में परिवर्तन हुआ।

संचार माध्यम मुख्यतः अंग्रेजो के मीडिया शब्द से आया है जिसका अर्थ है – दो बिन्दुओं को जोड़ने वाला। संचार माध्यम भी सम्प्रेषण एवं श्रोता को परस्पर जोडते हैं। मार्शल मेक्लुहान ने माध्यम का बहुत सटीक विवरण दिया है। वे कहते हैं – '' माध्यम का अर्थ मध्यस्थता करने वाला होता है, जो दो बिन्दुओं को आपस में जोड़ने का कार्य करते है। व्यावहारिक दृष्टि से जनसंचार एक ऐसा सेतु है जो विभिन्न समूह के श्रोताओं को एक विचारधारा में जोड़ता है।'' आज के दिन माध्यम मीडिया का स्थान ले चुका है। जबकि दोनों अर्थ समान है।

हेराल्ड लासवेल के अनुसार संचार माध्यम का कार्य सूचना संग्रह एवं प्रसार, सूचना विश्लेषण, सामाजिक मूल्य एवं ज्ञान का सम्प्रेषण, लोगों का मनोरंजन करना हैं। संचार माध्यमों का प्रभाव समाज में अनादिकाल से ही रहा है। संचार माध्यम का मुख्य रूप परम्परागत माध्यम है जो कि मनुष्य द्वारा आदिकाल से जनसंचार के लिए प्रयोग करता आया है। इसका मानव जाति की उन्नति से गहरा सम्बन्ध है। अनादिकाल से वर्तमान समय के सभी समाजों के इतिहास को हम देखें तो यह स्पष्ट हो सकेगा कि संचार के प्रति सभी समाज सतर्क थे। इसी कारण समाजों में सत्य–असत्य, प्रिय–अप्रिय, आदि प्रकार की मान्यताएँ अस्तित्व में आई।

संचार के क्षेत्र में भी समाज की उन्नति एवं आधुनिकीकरण के साथ–साथ परिवर्तन आये और संचार का ढांचा बदलकर संचार के माध्यमों का विकास हुआ। यदि हम मानव समाज एवं इसके औद्योगिक विकास की प्रक्रिया को देखें तो मानव ने भोजन, वस्त्र एवं आवास से जुड़े क्षेत्रों में निरंतर विकास के लिए शोध किया। जिसके कारण दूसरे उद्योग संचार से पीछे छूट गये। वर्तमान समय में सूचना उद्योग तथा तकनीक सबसे आगे है।

भारत में जन शब्द अधिक प्रचलित है। जन, शब्द, जान, जन, जानना से मिलता जुलता है। संचार के सम्बन्ध में जानना शब्द अधिक सम्बन्धित व उपयोगी दिखाई देता है। जानना शब्द ज्ञान या संज्ञान की भावात्मक प्रस्तूति है।

हम कह सकते है कि ज्ञ से ज्ञान, संज्ञान, जानना, जान–पहचान तक की यात्रा हमें सीधे रूप में दिखाई पड़ती है। इस प्रकार जन की परिभाषा स्पष्ट होती है कि जो जानता हो या जिसमें जिज्ञासा हो या जानने की प्रवृति हो।

संचार की परम्परा पुरानी है तथा परम्परागत संचार के लिए परम्परा को जानना आवश्यक है। परम्परा के लिए अंग्रेजी में Tradition का प्रयोग किया गया है। जिस का अर्थ भेजना या प्रसारण (Transmit) है। परम्परा और परम्परा संचार की मूल प्रवृति एक है। इसमें इतना ही अन्तर है कि परम्परा व्यापक है तथा समाज की विभिन्न परम्पराओं में परम्परागत संचार एक लघु इकाई मात्र है। इस प्रकार परम्परागत संचार परम्परा का एक लघु भाग या वर्गीकरण है। प्रायः यह भ्रम है कि जनसंचार आधुनिक समाज की देन है। वास्तव में जनसंचार की प्रवृति प्राचीन समय में भी थी। जनसंचार का सम्बन्ध इच्छा, कामना, या काम से जुड़ा है। यह प्रवृति प्राचीन समय एवं परम्परागत संचार में भी है। अतः हमें परम्परागत जनसंचार के अस्तित्व को हमें स्वीकार करना पडेगा। परम्परागत जन संचार में परम्परागत सम्प्रेषक, संदेश, माध्यम एवं परम्परागत प्रतिपुष्टि (फीडबैक) प्रमुख तत्व है। परम्परागत जनसंचार में धार्मिक ज्ञान की परम्परा, उपासना की पद्धति, लोकचार, जातीय अस्मिता, आदि को रख सकते है। जिस तरह दुनिया में फैले हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई यहुदी, बौद्ध आदि अपनी–अपनी धर्म परम्परा के अनुसार ईश्वर, उपासना आदि का वर्णन, विवेचन एवं सूचना का आदान–प्रदान करते है। यही परम्परागत जनसंचार है। भारत में कुम्भ मेला जनसंचार का एक स्टीक उदाहरण है।

एक निश्चित अवधि पर प्रयाग, हरिद्वार, नासिक एवं उज्जैन में लगने वाले कुम्भ मेले को हम परम्परागत जनसंचार की कोटि मे ही रख सकते है। परम्परागत माध्यमों के सन्दर्भ में भी भ्रम की स्थिति विद्यमान है। परम्परागत संचार माध्यमों के गर्भ में ही आधुनिक संचार माध्यमों का विकास हुआ है। परम्परागत माध्यमों के जितने प्रकार है उतने ही प्रकार आधुनिक संचार

माध्यमों के भी है। परम्परागत संचार अतीत एवं वर्तमान के बीच एक कड़ी है। परम्परागत संचार अपनी प्रकृति के कारण आधुनिक संचार से भिन्न तथा निरन्तर विद्यमान रहने वाला संचार है।

वर्तमान समय में राजनीतिक शक्ति, अर्थ, शिक्षा इत्यादि का सम्प्रेषण जनसंचार माध्यम पर आधारित है। एक साथ लाखों लोगों को सम्बोधित किया जा सकता है। वर्तमान समय में जनसंचार माध्यम और समाज में गहरा सम्बन्ध एवं निकटता है। जनसंचार माध्यम के द्वारा जन सामान्य की रूचि एवं हितों को स्पष्ट किया जाता है। जनसंचार माध्यमों ने बढ़ रही जनसंख्या की मांग के अनुसार यह आसान कर दिया है कि सूचना जनता तक पहुँच जाए। जनसंचार की उन्नति ने भौगोलिक एवं समय की सीमा को भी तोड़ दिया है। अतः हम एक दूसरे से दूर रहते हुए भी जनसंचार गाँव में रहते है।

जनसंचार को अंग्रेजी में मास कम्यूनिकेशन (Mass Communication) कहा जाता है। जिसका अर्थ बहुत बड़े समूह तथा बिखरे हुए लोगों तक संचार माध्यम द्वारा संदेश या सूचना पहुँचाना है। आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के अनुसार मास (जन) का अभिप्राय पूर्ण रूप से व्यक्तिवादिता का अन्त है। जन, समूह, भीड़, जनता से भिन्न होता है। इनमें व्याप्त भिन्नता को स्पष्ट कर सकते है। समूह का निर्धारण समान हितों, मूल्यों तथा सामान्य हितों की पूर्ति के लिए संगठित एवं अन्य क्रियाओं के आधार पर होता है। इसलिए जन से समूह भिन्न है। इसी प्रकार भीड़ एक स्थान पर आकस्मिक किसी घटना या दुर्घटना या भावुकता के आधार पर अस्थायी तौर पर एकत्र होती है। अतः यह भी जन से भिन्नता लिए हुए है। जनता का आकार विशाल होता है। इसका उद्देश्य या कारण तौर–तरीका सामाजिक जीवन से जुड़ा होता है। इसका मुख्य उद्देश्य रूचि, मत, राजनीतिक परिवर्तन का होता है।

जनसंचार का वर्तमान समाज पर गहरा प्रभाव है। इसी के द्वारा समाज की मनोदशा, विचार, संस्कृति एवं जीवन दशायें नियन्त्रित तथा निर्देशित हो रही है। जनसंचार के द्वारा व्यक्तियों के समाजीकरण की प्रक्रिया समाज में चलती रहती है। जनसंचार माध्यम लोगों का मनोरंजन करने के साथ ही साथ जनव्यवहार को भी नियंत्रित एवं निर्देशित करते हैं। इससे ज्ञान की वृद्धि होती है। राजनैतिक प्रोपेगण्डा अथवा अफवाह भी जनसंचार माध्यमों द्वारा संचालित की जाती है। जनसंचार के द्वारा लोगों को अर्थिक सूचनाएं तथा समाज की एक जीवनोपयोगी सूचनाएँ मिलती है।

परम्परागत जनसंचार माध्यमों के प्रभाव की सीमा या पहुँच भले ही कम हो लेकिन इससे होने वाले परिणाम एवं प्रभाव कोई मना नहीं कर सकता। यह अनपढ़ नागरिकों में भी अपना प्रभाव दिखाते है। लोकनाटयों में पात्र भले ही पौराणिक या ऐतिहासिक रहे हो, लेकिन उनका चरित्र अत्याचार का विरोध करने के रूप में उभरा। देश को आजाद कराने में इस माध्यम ने अपने अभिनय से लोगों में जोश भरा। द्विअर्थी संवादों ने सम्प्रेषण का एक नया स्वरूप गढा। आपस के हितों की रक्षा ने लोगों को एक धागे में पिरोकर रखा। परम्परागत माध्यमों में भाषा एवं बोली का बड़ा महत्व है। क्योंकि परम्परागत माध्यम उन्हीं दर्शकों की बोली में सम्प्रेषण करते है। इनके विकास में मनुष्य के रहन–सहन, क्षेत्रीय भाषा संस्कृति तथा सामाजिक परिवेश का प्रभाव देखा जाता है। इसलिए देश के विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार लोक धर्मी प्रदर्शनकारी अनेक बोलियों में इसका अस्तित्व देखा जा सकता है। परम्परागत माध्यम का सबसे बड़ा फायदा यही है इसमें दर्शकों को अपनापन महसूस होता है।

भाषा का अध्यनन करने को भाषा विज्ञान कहते हैं। भाषा विज्ञान में मानव जाति की ही भाषा का अध्ययन किया जाता है। मानवेतर प्राणियों की आवाजों को भाषा की शास्त्रीय सीमा में समाविष्ट नहीं किया जाता। आदिम अवस्था में मानव का उच्चारण पशु–पक्षियों की भांति रहा होगा। वह पशुओं की भांति प्राकृत, अप्रयत्मज एवं स्नायविक आवाजें करता होगा। पशुओं की भांति चीखता व रोता होगा। आदिम मनोभावों की अभिव्यक्ति प्राकृत एवं सहज वाक्–व्यवहार द्वारा करता होगा। जंगल में आग लग जाने पर डर के मारे उसके मुँह से चीख निकल पड़ती होगी, प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य को निहारकर वह झूमकर अलाप लेता होगा, जीवन–अंगिक चेष्टाएँ ही प्रत्युत सहज वाचिक उत्तेजनाएँ भी करता होगा।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि रोना, चिल्लाना, चीखना आदि आवाजें सहज स्नायियक प्रतिक्रियाएँ हैं किन्तु मानव भाषा के शब्द सहज स्नायविक प्रतिक्रिया करने वाले न होकर वाधित उत्तेजक होते है। इस दृष्टि से रोने, चिल्लाने, आदि की आवाजें भाषा में अध्ययन करने योग्य नहीं है। इसका कारण यह है कि ये प्राकृतिक, सहज स्नायविक प्रतिक्रियाएँ एवं समाज निरपेक्ष है। इसके विपरीत भाषा सीखी जाती है। बाधित प्रतिक्रिया एवं सामाजिक सम्पति है तथा इसी कारण प्राकृतिक एवं पैतृक नहीं है। भाषा के शब्द एवं उनके अर्थ उस भाषा समाज के द्वारा परम्परित रूप में मान्यता प्राप्त होती है और वहीं से व्यक्ति उनका अर्जन करता है। इस दृष्टि से हम मानव शिशु की आवाजों पर विचार कर सकते है। भाषा सीखने से पूर्व वह बड़बड़ाता है। बच्चे में इस अवस्था तक सहज प्रतिक्रियाएँ होती है। किसी भी बच्चे की सर्वाधिक प्राथमिक प्रतिक्रिया श्वास प्रतिक्रिया होती है। उसके बाद वह रोने–चिल्लाने आदि की वाक प्रतिक्रिया करता है। ये प्रतिक्रियाएँ सहज एवं अप्रयत्नज होती हैं। इन्हें सीखने की जरूरत नहीं होती।

यदि एक बच्चे का पालन–पोषण जीवन के आरम्भ से ही समाज निरपेक्ष स्थितियों में किया जाये तथा उसे ऐसी परिस्थितियों में रखा जाएं कि कोई भी व्यक्ति उससे किसी भाषा का कोई शब्द प्रयोग न करे तो वह बच्चा अन्य प्राकृतिक क्रियाओं की भांति आवाजें तो करेगा, किन्तु कोई भी भाषा बोलना नहीं सीख पायेगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भाषा सामाजिक सम्पति हैं और समाज में रहकर ही सीखी जा सकती है।

जिस प्रकार बहुत से पशु–पक्षी आवाजों के द्वारा सम्प्रेषण करते हैं उसी प्रकार आदिम अवस्था मे मनुष्य भी प्राकृत एवं सहज अनिच्छायत आवाजों के द्वारा ही सम्प्रेषण करता होगा। पशु–पक्षियों में भी ध्वनि उत्पादन एवं श्रवण की क्षमताएँ होती है। यहाँ बहुत से पशु–पक्षी ध्वनि उत्पादन करने में अधिक दक्ष होते है तो बहुत से ध्वनि सुनने में यह हमारा नित्य प्रतिदिन का अनुभव है कि हमारे धरों में तोता ध्वनि उत्पादन में अधिक प्रवीण होता है। तो कुता ध्वनि सुनने में। मनुष्य की दक्षता ध्वनि सुनने में है तथा ध्वनि उत्पन्न करने में। केवल ध्वनि उत्पादन एवं श्रवण–क्षमता ही नहीं, मनुष्य में शब्दों को याद रखने की भी अदभुत क्षमता है। शारीरिक दृष्टि से तोता आदि कुछ पक्षियों को छोड़कर शेष मानवेत्तर पशु–पक्षी बिना प्रयास के अनिच्छायत ध्वनियों का ही उच्चारण कर पाते है। सायास स्वेच्छाकृत ध्वनियों का ही उच्चारण नहीं कर पाते। मनुष्य में

सहज शक्तियाँ जितनी है। उनसे सहस्त्र गुनी शक्तियों का विकास उसने स्वयं किया है। यही कारण है कि वह प्राकृत आवाज करने तक ही सीमित नहीं रहा, सायास बोली जाने वाली भाषा का निर्माण एवं विकास कर सकने मे समर्थ सिद्ध हो सका। नियन्त्रित सुरों एवं सुर लहर के विभिन्न स्तरों का प्रयोग करना सीखा। जिह्वा को विविध स्थितियों में ले जाकर विविध स्थानों से ध्वनियों का उच्चारण करना सीखा। मनुष्य ने अपनी शारीरिक संरचना, मानसिक विकास और जीवन की आवश्यकता के कारण प्रतीकात्मकता का विकास कर लेने के कारण भाषा का निर्माण कर लिया। पशु–पक्षी अपनी बात आज भी जहाँ मनोभावभिव्यंजक आवाजों, भाव–भंगिमाओं अथवा अपने शरीर की गतियों को घटाने–बढाने के द्वारा अभिव्यक्त कर पाते है। वही मनुष्य हजारों वर्षों पूर्व ही ज्ञान के एक पीढी से दूसरी पीढी तक अविच्छिन्न संयम एवं स्थानान्तरण के लिए वाक् प्रतिकों का प्रयोग कर पशु–जगत् के सम्प्रेषण साधनों से भिन्न मानव भाषा का निर्माण करने में समर्थ हो गया था। मानवता का इतिहास एक सुगठित भाषा को प्रारंभ से ही आधार मानकर चला है। भाषा के बिना मानव समाज का विकास सम्भव नहीं था।

मनुष्य को सामाजिक सम्प्रेषण एवं सामाजिक विकास के लिए प्रतीकात्मकता की आवश्यकता पडी जिसके कारण मनुष्य, खाने, देखने, एवं चलने जैसी मूल क्रियाओं के समान प्रतीकों का निर्माण करने में समर्थ हो सका। यह मनुष्य के मानसिक जगत की आधरभूत प्रक्रिया है तथा सभ्यता के विकास के साथ यह प्रक्रिया अनवरत बढती रही है।

एक भाषा का जन–समुदाय अपनी भाषा के विविध रूपों के माध्यम से एक भाषिक ईकाई का निर्माण करता है। विविध भाषा रूपों के मध्य संभाषण की संभाव्यता से भाषिक एकता का निर्माण होता है। एक भाषा के समस्त रूप जिस क्षेत्र में प्रयुक्त होते है उसे उस भाषा का भाषा क्षेत्र कहते है। प्रत्येक भाषा क्षेत्र में भिन्नताएँ होती है। भाषा की भिन्नताओं के आधार पर प्रायः वर्णगत एवं धर्मगत नहीं होता। एक वर्ण या एक धर्म के व्यक्ति यदि भिन्न भाषा क्षेत्रों में निवास करते हैं तो वे भिन्न भाषाओं का प्रयोग करते है। हिन्दू, मुसलमान आदि धर्म के लोग तमिल क्षेत्र में तमिल भाषा का प्रयोग करते है तथा बंगला क्षेत्र में बंगला भाषा का। इससे अलग दो वर्णों या धर्मों के व्यक्ति एक भाषा क्षेत्र में रहते हैं तो उनके साथ एक ही भाषा को बोलने की सम्भावनाएँ अधिक होती है। हिन्दी भाषी क्षेत्र में रहने वाले सभी जाति, वर्ण, के व्यक्ति हिन्दी का ही प्रयोग करते है।

प्रत्येक व्यक्ति के अनुभवों, विचारों, आचरण, पद्धतियों जीवन व्यवहारों एवं कार्यक्लापों को निजी विशेषताएँ होती है। समाज के सदस्यों के व्यक्तित्व की सूक्ष्मतम भिन्नताओं का प्रभाव उनके व्यक्तिगत भाषा रूपों पर पड़ता है और इस कारण प्रत्येक व्यक्ति की बोली में निजी भिन्नताएँ अवश्य होती है। व्यक्ति बोली के धरातल पर एक व्यक्ति जिस प्रकार बोलता है ठीक उसी प्रकार दूसरा व्यक्ति नहीं बोलता। यही कारण है कि हम किसी व्यक्ति को बिना उसे देखे ही मात्र आवाज को सुनकर, पहचान लेते हैं।

भाषा क्षेत्र की समस्त व्यक्ति बोलियों एवं उस क्षेत्र की भाषा के मध्य प्रायः बोली का स्तर होता है। भाषा की क्षेत्रगत एवं वर्गगत भिन्नताओं को क्रमशः क्षेत्रगत एवं वर्गगत बोलियों के नाम से पुकारा जाता है। इसको इस प्रकार भी कह सकते हैं कि भाषा की संरचक बोलियाँ होती है तथा बोली की संरचक व्यक्ति बोलियाँ।

इस प्रकार तत्वतः बोलियों की समष्टि का नाम भाषा है। भाषा क्षेत्र की क्षेत्रगत भिन्नताओं एवं वर्गगत भिन्नताओं पर आधारित भाषा के भिन्न रूप उसकी बोलियाँ है। बोलियों से अलग भाषा कोई चीज नहीं है। वस्तुतः बोलियाँ अनौपचारिक एवं सहज अवस्था में अलग–अलग क्षेत्रों में उच्चारित होने वाले रूप है। जिन्हें संस्कृत में देश भाषा तथा अपभ्रंश में देशी भाषा कहा जाता है। भाषा का मानक रूप उन समस्त बोलियों के मध्य एक सम्पर्क सूत्र का काम करता है। भाषा की क्षेत्रगत एवं वर्गगत भिन्नताएँ उसे बोलियों के स्तरों में विभाजित कर देती है।

व्यक्ति बोलियों के समूह को बोली तथा बोलियों के समूह को भाषा कहा गया है। जिस प्रकार किसी भाषा के व्याकरण में शब्द एवं वाक्य के बीच अनेक व्याकरणिक स्तर हो सकते है। उसी प्रकार भाषा एवं बोली तथा बोली एवं बोली व्यक्ति बोली के बीच अनेक भाषा स्तर हो सकते हैं। इनके आधार भाषा क्षेत्र की विशालता, व्यापकता, उस भाषा क्षेत्र के विविध उपक्षेत्रों को भोगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक स्थितियाँ तथ उनमें निवास करने वाले व्यक्तियों के पारस्परिक भावात्मक सम्बन्ध होते है।

यदि किसी भाषा में बोलियों की संख्या बहुत अधिक होती है तथा उस भाषा का क्षेत्र बहुत विशाल होता है तो पारस्परिक बोधगम्यता अथवा अन्य भाषेतर कारणों से बोलियों के वर्ग बन जाते हैं। इनको उस भाषा के स्तर के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

यदि एक बोली का क्षेत्र बहुत विशाल होता है तो उसमें क्षेत्रगत अथवा वर्गगत भिन्नताएँ स्पष्ट दिखाई देती है। इनको बोली एवं व्यक्ति बोली के बीच उपबोली का स्तर, माना जा सकता है। इस प्रकार भाषा के संरचक उपभाषाएँ, उपभाषा के संरचक बोलियाँ, बोली के संरचक उपबोलियाँ उपबोली के संरचक व्यक्ति बोलियाँ है। व्यक्ति बोली से लेकर भाषा तक अनेक स्तरों का अधिकतम स्थापित हो जाता है।

उपबोली को कुछ भाषा वैज्ञानिकों ने पेटवा, जनपदीय बोली अथवा स्थान विशेष की बोली के नाम से पुकारना ज्यादा तर्कसंगत माना है। हिन्दी भाषा के सन्दर्भ में विचारणीय है कि अवधी, बुन्देली, छतीसगढ़ी, ब्रज, कन्नौजी, खड़ी बोली को बोलियाँ मानें या उप भाषाएँ ? देखने वाली बात है कि इनके क्षेत्र तथा इनके बोलने वालों की संख्या काफी विशाल है तथा इनमें बहुत अधिक भिन्नताएँ है जिसके कारण इनको बोली की उपेक्षा उपभाषा मानना अधिक तर्क संगत है।

जिस प्रकार बुन्देली में बोलियाँ एवं उनकी उपबोलियाँ मिलती हैं उसी प्रकार कन्नौजी की बोलियाँ एवं उनकी उपबोलियाँ अथवा हरियाणवी की बोलियाँ एवं उपबोलियाँ प्राप्त नहीं होती। किन्तु हरियाणवी एवं कन्नौजी को भी वही दर्जा देना पडेगा जो हम बुन्देली को देगें। अगर बुन्देली को हिन्दी की एक उपभाषा मान लेते है तो कन्नौजी एवं हरियाणवी भी हिन्दी की उपभाषाएँ है। इस दृष्टि से हिन्दी के क्षेत्रगत रूपों के स्तर वर्गीकरण में कही उपभाषा एवं बोली के अलग–अलग स्तर है तथा उपभाषा एवं बोली का एक ही स्तर है। यह बहुत कुछ इसी प्रकार है

जिस प्रकार मिश्र एवं संयुक्त वाक्यों में वाक्य एवं उपवाक्य के स्तर अलग–अलग होते है किन्तु सरल वाक्य में एक ही उपवाक्य होता है।

बहुभाषा–भाषी राष्ट्र में जहाँ एक ओर राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा का विकास होता है वहीं व्यापार केन्द्रों प्रवासी, बस्तियों, विस्थापितों के लिए बसाई गई बस्तियों, शहर के भिन्न भाषा–भाषी व्यक्तियों के मुहल्लों एवं कालोनियों, छात्रावासों, कार्यालयों एवं सेना में व्यावहारिक स्तर पर मिश्रित भाषा पनपने लगती है। इसके दो रूप है। (1) पिजिन (2) क्रिओल

पिजिन ऐसी मिश्रित भाषा होती है जिसका मूलाधार कोई एक भाषा होती है। किन्तु जिसमें अन्य भाषाओं के तत्व मिले रहते है। अंग्रेज व्यापारियों द्वारा चीनी व्यापारियों से वार्तालाप के लिए किस भाषा रूप का विकास हुआ। उसके लिए मूलतः पिजिन शब्द का प्रयोग किया गया। इसी प्रकार भारतीय सेना के जवानों के बीच एक मिश्रित भाषा का विकास हो रहा है। जिसका मूलाधार हिन्दी है किन्तु उसमें अन्य भारतीय भाषाओं के तत्व भी समाहित हो रहे हैं।

क्रिओलित भाषा का जन्म दो भाषाओं के अत्याधिक मिश्रण के फलस्वरूप होता है। जब किसी क्षेत्र के गुलाम अपने विजेता स्वामी की भाषा अपनाने लगते है तो क्रिओल का जन्म होता है। जैसे मारीशस में फ्रांसीसी शासकों का शासन रहा। वहाँ के मूल निवासियों तथा भारत मूल के निवासियों ने फ्रेंच भाषा की व्याकरणिक व्यवस्थाओं को अपने अनुरूप सरल बनाकर सामान्य व्यवहार के लिए क्रिओल का विकास कर लिया।

भाषा के कारण मनुष्य जनता के प्राणियों में सर्वोपरि है। संस्कृति के अन्य घटक अपनी अभिव्यक्ति के लिए भाषा पर आश्रित रहते है। संस्कृति भाषा में सबसे अधिक सटीक रूप में अभिव्यक्त होती है। भाषा के माध्यम से संस्कृति के घटक संगठित परिभाषित एवं व्याख्यायित होते है।

भाषा संस्कृति का अंग है। भाषा एवं संस्कृति में गहरा सम्बन्ध होने पर भी भाषा एवं संस्कृति पर्याय नहीं हैं। भाषा क्षेत्र की सीमा और सांस्कृतिक क्षेत्र की सीमा बिल्कुल समान ही हो यह जरूरी नहीं हैं। उनकी सीमा क्षेत्रो में भिन्नता भी हो सकती है। विश्व में संस्कृतियों की संख्या तथा मानव जीवन में व्यवहृत भाषाओं की संख्या समान नहीं हैं।

संस्कृति के इतिहास में हरियाणा ही वह भू–भाग है जो अपने ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व को अपने से दूर रख कर भी भारतीय जन जीवन में एक महती भूमिका अदा करता हैं। इस रूप में यहाँ की कल्चर शुद्ध में एग्रीकल्चर है जो जीवन के सुचारू संचालन के लिए भी अपेक्षित और अनिवार्य है। देश में पंजाब के बाद हरियाणा का ही खाद्यान्न उत्पादकों में महत्वपूर्ण स्थान हैं। अपने खाद्यान्न–उत्पादन द्वारा भारत के अधिकांश भू–भाग को यह राज्य खाद्यान्न फसलों का निर्यात करता है।

भारत विविध संस्कृतियों और प्रान्तों वाला देश है। विभिन्न प्रान्तों की मिली–जूली संस्कृति ही सही अर्थ में भारतीय संस्कृति हैं। इस दृष्टि से हरियाणा प्रदेश का भी भारतीय जनजीवन के निर्माण में न्यूनाधिक महत्व अवश्य रहा है। हरियाणा चारों तरफ से विशिष्ट भौगोलिक सीमाओं से धिरा हुआ राज्य हैं। इसके उत्तर में शिवालिक की पर्वतमाला तथा धग्धर नदी हैं। यमुना नदी इसकी पूर्वी सीमा का निर्धारण करती है। इसके दक्षिण में अरावली पर्वतमाला और पश्चिम में राजस्थान का मरूस्थल हैं। इस प्राकृतिक सीमा ने यहाँ के आवागमन एवं संचार को सदैव बाधा पहुचाँई हैं।

प्राचीन हरियाणा की भाषा के विषय में निश्चित उल्लेख किसी ग्रन्थ में नहीं हुआ है। वैदिक साहित्य तथा हरियाणा से सम्बन्धित महाकाव्य कालीन उल्लेखों से वह अनुमान किया जा सकता है कि आरंभ में यहाँ की भाषा संस्कृत रही होगी। मध्यकाल में इस्लामी प्रभाव के कारण यहाँ उर्दू–फारसी भाषाओं का प्रचलन रहा उसी के साथ सिखों के शासन एवं हरियाणा निर्माण से पूर्व तक पंजाब राज्य का एक हिस्सा होने से तथा पंजाब के समीपवर्ती होने के कारण पंजाबी भी इस भू–भाग पर बोली जाती रही है और पठन–पाठन के माध्यम के रूप में भी उसे स्वीकार किया जाता रहा है।

अज्ञान एवं पश्चिमी पंजाबियों के सांस्कृतिक प्रभाव के कारण यहाँ का जनमानस आज भी अंग्रेजी का कायल है। हिन्दी शब्दों का उच्चारण भी अंग्रेजी उच्चारणों के अनुसार करता है। हरियाणा को हिन्दी भाषा के नाम पर पृथक राज्य के रूप में गठित हुए पचास साल हो चुके हैं। किन्तु आज (राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के उपरान्त) भी राज्य में हिन्दी को हेय दृष्टि से ही देखा और पढा जाता हैं। व्यवहार में और राजकार्यों में आज भी यहाँ अंग्रेजी का ही वर्चस्व हैं। विश्वविद्यालयों में हिन्दी आधे विषय के रूप में पढाने की व्यवस्था स्वयं राज्य में हिन्दी (भारतीय संस्कृति) के साथ हो रहे अपमान को घोषित करती है। संवैधानिक रूप से न्यायालय की भाषा भी अंग्रेजी ही हैं। कई बार ऐसा अनुभव होने लगता है कि हरियाणा हिन्दी भाषा राज्य नहीं वरन् अंग्रेजी भाषी राज्य हैं। हरियाणा के पूर्नगठन के बाद यहाँ के जनमानस की बोल–चाल को जिसे बोली कहना अधिक उपयुक्त है बागरु हैं जिसका आधुनिक नाम हरियाणवी बोली हैं। जाट, अहीर, हरिजन, जातियाँ, गुजर, राजपूत, इसी बोली से अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। मूसलमानों की मेव, पठान आदि जातियों द्वारा बोली जाने वाली हरियाणवी में उर्दू–फारसी के शब्दों की बहुलता हैं।

हरियाणवी पश्चिमी हिन्दी की प्रमुख बोली है। जोकि बड़ी ओजस्वी और पोरूष प्रधान भी हैं। यह वीर रस के वर्णन के लिए बहुत उपयुक्त है। इसकी विशेषता ही स्पष्टवादिता एवं निष्कपटता हैं। हिन्दी की दूसरी बोलियाँ की बजाय यह सर्वाधिक ओज गुण प्रधान हैं। इसी कारण ओज प्रधान वीरगाथाओं का वर्णन यहाँ के लोकजीवन में प्रचलित हैं। हरियाणवी का परिष्कृत रूप ही खड़ी बोली है जो भारत की मानक राष्ट्रभाषा हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास में हरियाणवी भाषा और लोकसाहित्य का महत्वपूर्ण योगदान हैं। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी हरियाणा के भजन गायकों, कथावाचकों, राग रागनियों और सांगियों (लोक नाटककार) का अत्याधिक योगदान और सहयोग रहा हैं। हरियाणा के लोगों के सरल, सात्विक और सादगीपूर्ण जीवन की झलक हरियाणवी में साफ–साफ दिखाई पड़ती हैं। धर्मपरायणता और नैतिकता यहाँ के लोगों की विशेषता रही हैं। अन्याय को सहन न करना यहाँ की धरती का गुण हैं। डा. शंकर लाल यादव का कहना हैं – कि हरियाणवी में ब्रज, अवधी, मैथिली, बंगला और भोजपुरी की वह सरसता एवं मधुरता भले ही न मिलें परन्तु इसके स्वरों के उच्चारण की दीर्धता एवं फैलाव इसकी अपनी वस्तु हैं। हरियाणा प्रदेश की शक्ति –सम्पन्न जातियों का बलिष्ठ उच्चारण उनकी वाणी के प्रत्येक स्वर और व्यंजन से फूट पड़ता

हैं। जो अपनी कर्कशता में आकर्षक एवं दीर्घता में भी मधुर हैं। इसमें ध्वनियाँ बड़ी प्राचीन है और कई अंश ऐसे है जिसमें अपभ्रंशकालीन अवशेष विद्यमान हैं जो शब्दों को प्राचीनता का इतिहास बताते हैं। इसीलिए कहा जा सकता है कि हरियाणवी एक प्राचीन बोली है और अपना स्वतंत्र अस्तित्व लिए हुए हैं।

वर्तमान हरियाणा प्रदेश का भाषाई और सांस्कृतिक रूप एक विशाल हरियाणा भी हैं। जिसकी सीमाएँ सहारनपुर, मेरठ, गाजियाबाद, बुलंदशहर, मथुरा, भरतपुर, अलवर, गंगानगर, अबोहर–फाजिल्का आदि को अपने में समेटती हैं। हरियाणवी भाषा के क्षेत्र की दृष्टि से दिल्ली देहात की भाषा और संस्कृति हरियाणा से ही सम्बन्धित हैं। हरियाणा क्षेत्र–विस्तार के सम्बन्ध में संत गरीबदास के पुत्र संत जैतराम का निम्नलिखित पद उल्लेखनीय हैः–

दिल्ली मंडल देस बखानो, हरियाणा कहलावै।

बागड़ जमना सन्धि बिचाले, सुखदाई मन भावै।।

भारत में बहुत भाषाऐं बोली जाती हैं। जिसमें संस्कृत, अरबी, फारसी आदि हैं। विभिन्न भाषाओं के होते हुए भी भारत में भावात्मक एकता हैं। जिसके फलस्वरूप भारतीय समाज में देशप्रेम की भावना विद्यमान हैं। सभी भाषाओं का साहित्य भारत के आदर्शो और अस्मिता का प्रतीक हैं। हरियाणा राज्य की भाषा हरियाणवी की अनेक उपभाषा या बोलियाँ हैं। जिनका परिचय इस प्रकार हैं।

1) **बागरूः**– बागरू शब्द स्थान से सम्बंधित हैं। जिसमें 'ऊ' सम्बन्धवाचक प्रत्यय जुड़ने से बागरू शब्द निष्पन्न होता हैं। बांगर हरियाणा के एक भू–भाग का नाम सदियों से प्रचलित रहा है। पहले यह भू–भाग सुखा, अनुपजाऊ डाकर समतल कठोर भूमि, जो वर्षा के जल को शीध्र सोंख कर कठोर हो जाए के नाम से प्रसिद्ध रहा हैं। वर्तमान समय में सिचाई के साधनों नहरों और नलकूपों आदि के कारण यह भू–भाग अत्यन्त उर्वर और धनधान्य से सम्पन्न हैं। हरियाणा में अन्य बोलियों की अपेक्षा बांगरू का क्षेत्र अत्यंत बड़ा विस्तृत हैं। इस क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा का नाम बांगरू रूढ़ हो गया हैं। बांगरू हरियाणा की केन्द्रीय और प्रतिनिधि बोली हैं। बांगरू प्रमुखता सोनीपत, रोहतक, जीन्द, पानीपत और भिवानी की बोली हैं। अतः बांगरू को हरियाणवी का पर्यायवाची कहना उचित नहीं लगता। हरियाणा की अन्य बोलियों की तुलना में बांगरू का हरियाणा के लोकसाहित्य में सर्वाधिक योगदान हैं। अधिकांश लोकनाटय, राग–रागनियों, भजन, किस्से कहानियों, लोककथा, लोकगाथा, बांगरू में मिलते हैं।

2) **कौरवीः**– कौरव प्रदेश में बोली जाने वाली जनभाषा कौरवी कहलाती हैं। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल और महापंड़ित राहुल सांकृत्यान ने उत्तरी हरियाणा में बोली जाने वाली भाषा को कौरवी स्वीकार किया हैं। कौरवी का क्षेत्र पश्चिमी उत्तरप्रदेश के सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, मेरठ, गाजियाबाद, बागपत उत्तरी हरियाणा में अम्बाला, यमुनानगर, कुरूक्षेत्र, करनाल, कैथल, दिल्ली का पूर्वी भाग हैं। प्रधानतया यह कौरव प्रदेश की लोकभाषा रही हैं। इसे कुरू जनपद की बोली भी कहा जाता हैं। खड़ी बोली हिन्दी के विकास में कौरवी का महत्वपूर्ण योगदान हैं। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल ने तो कौरवी को खड़ी बोली का ही नाम दिया हैं।

3) **अहीखांटीः**– अहीरवाल क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा को अहीरवाटी कहते हैं। अहीरवाटी, अहीरी, हीरी, हरियाणवी की एक बोली हैं। जिसकी अपनी अपनी अलग पहचान हैं। अहीरवाटी बोली बांगरू, बागड़ी, मेवाती, और जयपुर आदि से धिरी हुई हैं। ब्रज और राजस्थानी का प्रभाव भी इस पर दृष्टिगोचर होता हैं। अहीरवाटी बोली का क्षेत्र विस्तार हरियाणा, दिल्ली और राजस्थान से लगा हुआ हैं। हरियाणा में इसका प्रभाव रेवाड़ी, कोसली, महेन्द्रगढ़, नारनौल, पटौदी तथा झज्जर तहसील का कुछ भाग हैं। गुड़गाँव तथा भिवानी के कुछ क्षेत्रों में भी यह बोली जाती हैं। दक्षिणी दिल्ली के आस पास के गांव के अहीर जाति के बहुत से लोग अहीरवाटी बोली बोलते हैं। राजस्थान के बहरोड़, मुडांवर, किशनगढ़, बांसूर, कोटपुखली, के उत्तरी भाग में भी अहीरवाटी बोली जाती हैं। इसमें बांगरू, मेवाती, बागड़ी और ब्रज का पुट भी मिलता हैं। अहीरवाटी में ब्रज का माधुर्य, हरियाणवी का ओज तथा राजस्थानी का प्रसाद दृष्टिगोचर होता हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से अहीरवाटी बड़ी प्राचीन बोली हैं।

4) **बागड़ीः**– बागड़ी, बागड़ क्षेत्र की बोली हैं। बागड़ शब्द बार्गट, बागट, वगाड़, वाग्वर आदि रूप से शिलालेखों पर उत्कीर्ण मिलता हैं। जिसमें जंगल, विशाल और विस्तीर्ण, ऊँची और रेतीली भूमि जहाँ बाढ़ न आ सके आदि के अर्थ में प्रयुक्त होता हैं। हरियाणावासी इसका अर्थ ऊँचे–नीचे रेतीले शुष्क टीले या थाली के क्षेत्र के रूप में लेते हैं। हरियाणा का यह भूखण्ड इसके पश्चिम और दक्षिण क्षेत्र में स्थित हैं। बागड़ी हरियाणा के विस्तृत भू–भाग में बोली जाने वाली एक बोली हैं जिसका राजनीतिक सीमा की दृष्टि से अधिकांश क्षेत्र राजस्थान में हैं। यह प्रमुखता बिश्नोई बहुल इलाके में बोली जाती हैं। हरियाणा में बागड़ी बोली का क्षेत्र भिवानी के पश्चिम क्षेत्र लोहारू से आरम्भ होकर हिसार के पश्चिम भाग में सिवानी, दड़बा कलां, फत्तेहाबाद, ऐलनाबाद, चौटाला, डबवाली, रोड़ी तथा सिरसा के निकटवर्ती भाग हैं। यह क्षेत्र बांगरू, अहीरवाटी, शेखावटी और किसी सीमा तक पंजाबी भाषा–भाषियों से धिरा हुआ हैं। लोकसाहित्य की दृष्टि से बागड़ी सम्पन्न बोली हैं।

5) **मेवातीः**– मेव जाति के क्षेत्र को मेवात कहा जाता हैं। मेवात क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा मेवाती कहलाती हैं। डा. रामप्रकाश विकल ने मेवाती बोली का विवेचन करते हुए लिखा हैं कि मेवाती एक सीमान्त बोली हैं जो एक साथ सात–आठ उपभाषाओं के मध्य स्थित हैं। मेवाती के पूर्व में ब्रज, दक्षिण में जयपुरी और ढूंढारी, उत्तर–पश्चिम में अहीरवाटी हैं। निश्चय ही मेवाती अपनी इन निकटवर्ती बोलियों के

प्रभाव से अछूता नहीं हैं। मेवाती में बांगरू, ब्रज, अहीर तथा बागड़ी का सम्मिश्रण है। मेवाती के शब्द–भण्डार पर राजस्थानी और ब्रज का प्रभाव हैं मेवाती की शब्दावली में अरबी फारसी का पुट मिलता हैं।

6) **ब्रजबोली**:– ब्रजमंडल की भाषा को ब्रज बोली कहा जाता हैं। ब्रज का शाब्दिक अर्थ– गोचर भूमि जहाँ निरन्तर गाएं चरती रहती थी। वह क्षेत्र ब्रजभूमि के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मूलतः ब्रज एक जमीन के टुकड़े का नाम हैं। जिसका क्षेत्र हरियाणा, उत्तरप्रदेश और राजस्थान है। ब्रज के निवासियों द्वारा बोली जाने वाली बोली को कालान्तर में ब्रज कहा जाने लगा। लोकप्रचलित ब्रज–बोली या ब्रज–भाषा ने हिन्दी भाषा–साहित्य और भक्ति आन्दोलन के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

ब्रज बोली हरियाणा के फरीदाबाद जिले के बल्लभगढ़ पलवल, होडल और हसनपुर में बोली जाती हैं। राजस्थान के भरतपुर, अलवर के पूर्वी भाग करोली, द्यौलपुर आदि में ब्रज का प्रचलन हैं। उत्तर प्रदेश में मथुरा, अलीगढ़ और आगरा ब्रज के गढ माने जाते हैं। खड़ी बोली में पहले ब्रज का प्रचलन सुदूर भारत के सुदूर भागों में था। बल्लभ संप्रदाय, चैतन्य सम्प्रदाय और अकबरी दरबार मे ब्रज भाषा के विकास मे अभूतपूर्व योगदान दिया। आसाम के शंकरदेव और माधवदेव आदि ने ब्रज बोली को अपनाया। हिन्दी की सभी बोलियों में ब्रज अपने माधुर्य के लिए प्रसिद्ध हैं। आज भी परम्परागत राम–लीलाएं बज भाषा में ही होती हैं। इसके साहित्य की परम्परा आधुनिककाल में भी विद्यमान रही हैं।

हरियाणा की भाषा का क्षेत्र कृषि प्रधान हैं। यहाँ की संस्कृति में कृषिमूलक संस्कृति मुख्य है। आधुनिक युग में कृषि से सम्बन्धित अनेक पुराने औजार प्रायः लुप्त होते जा रहे हैं। यही कारण है कि अनेक हरियाणवी शब्द भी सामान्य बोल–चाल को हरियाणवी भाषा से विलुप्त हो चुके हैं।

किसी समय किसान का वाहन, गाड्डी, रथ और मंझौली हुआ करते थे और उनसे सम्बन्धित अनेक शब्द अैरण, ऊंगना, ऊंटणा, घोड़ी, तथा किसान की वेशभूषा मे मंडासा आदि शब्द प्रचलित थे। वर्तमान पीढ़ी इन सबसे अपरिचित है। कृषि के मशीनीकरण होने पर अनेक नए शब्द हरियाणवी में प्रचलित हो गए हैं। अतः इस समस्त विश्लेषण का तात्पर्य है किसी भाषा का विश्लेषण केवल उसके मौखिक या शाब्दिक उच्चारण से ही नहीं किया जा सकता बल्कि उस क्षेत्र की सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना का विश्लेषण भी अपेक्षित हैं।

सामाजिक और सांस्कृतिक विश्लेषण पर हरियाणा के लोगों के रहन–सहन, वेशभुषा, रीति–रिवाज, खान–पान, मेले–पर्व, त्यौहार, और धार्मिक विश्वास आदि की अपनी विशेषताएँ हैं। धोती, साफा और रंग–बिरंगी जूतियाँ यहाँ के पुरुषों की पहचान हैं। महिलाएँ, दामण, लता और सोने–चाँदी के आभूषणों से श्रृंगार करती हैं। हरियाणा विशेषकर शाकाहारी प्रदेश रहा हैं। जिसके सम्बन्ध में यह उक्ति लोक प्रसिद्ध है – देसा में देस हरियाणा, जित दूध दही का खाणा। अतिथि भाव यहाँ के लोगों का विशेष आदर्श रहा है। विशेष अवसरों पर पर्व–मेले और त्यौहारों का आयोजन यहाँ की सामाजिक संस्कृति का अभिन्न अंग रहे है। लगभग सारे पर्व और त्यौहार ऋतुचक्र सावन से लेकर फागुन तक चलते है। अतः लोकोक्ति भी इस उपलक्ष्य में प्रसिद्ध है –'' आई तीज बो गई बीज तथा आई होली भी ले गई झोली।''

कुलीन परिवारों में बोली जाने वाली भाषा और सुदूर देहात में बोली जाने वाली भाषा में भी अन्तर सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का है। जहाँ अभिजात्य परिवारों में भाषा का सुसंस्कृत निखरा रूप मिलता है वहाँ जनसाधरण परिवारों में भाषा का वैसा रूप नहीं मिलता। उनकी भाषा में ग्रामीण पृष्ठभूमि मिलती है। सामाजिक, और सांस्कृतिक स्तर पर हरियाणा की भाषा अपनी राजनैतिक और भौगोलिक सीमाओं को पार करके अन्य राज्यों में भी फैल रही हैं। वैज्ञानिक और तकनीकी उपकरणों के माध्यम से आकाशवाणी, दूरदर्शन तथा फिल्मों द्वारा हरियाणवी का विस्तार हो रहा है। हरियाणा में विभिन्न टी.वी चैनल खुल गए है। जिन पर हरियाणवी संस्कृति पर कई कार्यक्रम प्रसारित किए जाते है। ई.टी.वी पर तो हरियाणवी बोली में खबरें भी प्रकाशित होती है। प्राइवेट न्यूज चैनलों पर हरियाणी लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अलग–अलग कार्यक्रम होते है। इसके साथ ही साथ हरियाणा का एक मात्र दूरदर्शन केन्द्र हिसार में है। जिसमें लगभग सारे कार्यक्रम हरियाणवी संस्कृति के ही प्रसारित होते है। साथ साथ हरियाणा में रेडियों स्टेशन भी हरियाणवी लोक साहित्य के उत्थान के लिए खुले हैं। जिसमें रोहतक आकाशवाणी का सबसे पुराना स्टेशन है। इसके साथ अब एफ. एम स्टेशन भी खुल गए है। जो हरियाणा संस्कृति को बढ़ावा देने में पूरा योगदान दे रहे हैं। विभिन्न जिलों तथा विश्वविद्यालयों में कम्यूनिटी रेडियों भी खुले है तथा उस क्षेत्र की संस्कृति को बढ़ावा दे रहे हैं। हरियाणवी बोली व संस्कृति का बालीवुड में भी बोलबाला रहा है। पिछले कई दशकों से हरियाणा के कई कलाकार हरियाणवी संस्कृति व बोली का प्रचार प्रसार कर रहे है। हरियाणवी संस्कृति में बनने वाली पहली हिट फिल्म 1984 में चन्द्रावल बनी उसके बाद तो कई हरियाणवी फिल्में पर्दे पर आई जिनमें फाल्गुन आयो रे, जाट, लाड़ो बसन्ती, गुलाबों, लम्बरदार, जाट हरियाणे का, जाटणी प्रमुख हैं। बालीवुड में पिछले दिनों हरियाणवी पृष्ठभूमि पर ही सुल्तान, दंगल, जैसी फिल्म आई जिनमें हरियाणवी संस्कृति व बोली का खूब प्रयोग किया गया।

संदर्भ

प्रो. चन्द्रकान्त सरदाना एवं प्रो. कृ. शि. मेहता (2004). जनसंचार कल, आज और कल, ज्ञानगंगा नई दिल्ली

सविता चडढ़ा (2000). हिन्दी पत्रकारिता, दूरदर्शन और टेलीफिल्म, राजसूर्य प्रकाशन, दिल्ली

प्रवीन दीक्षित (1983). जन माध्यम और पत्रकारिता (खंड 1 और 2) सहयोगी साहित्य संस्थान

डा. पूर्णचन्द्र शर्मा (1987). लोकसंस्कृति के क्षितिज, संजय प्रकाशन दिल्ली

डॉ. के सी यादव (1986) हरियाणा का इतिहास एवं संस्कृति, हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़

डॉ. नरेश (1990). हमारे रीति रिवाज, हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़

डॉ. शंकरलाल यादव (1988). हरियाणा प्रदेश का लोकसाहित्य, हिन्दुस्तान एकेडमी चण्डीगढ़

डॉ. भीम सिंह मलिक (1981). हरियाणा लोकसाहित्य, , सांस्कृतिक संदर्भ, चिता प्रकाशन दिल्ली

डॉ. गुणपाल सांगवान (1989) हरियाणवी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डगढ़

डॉ. पूर्णचन्द शर्मा (1990). हरियाणवी साहित्य और संस्कृति, हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़

डॉ. रामनिवास मानव (2009). हरियाणवीः बोली और साहित्य अमित प्रकाशन, गाजियाबाद

Corresponding Author

Deepak Rathee*

Assistant Director, Credes Media Solution Pvt. Ltd., New Delhi

E-Mail – ratheedeepak14@gmail.com